

SWAMI VIVEKANAND AUR BHARTIYA RASTHRAVAD: EK SAMIKSHATMAK ADHYAYAN

स्वामी विवेकानंद और भारतीय राष्ट्रवाद : एक समीक्षात्मक अध्ययन

Smita

ABSTRACT

1893 में शिकागो की धर्मसभा में दिया गया विवेकानंद जी का भाषण उनकी विश्व बंधुत्व की सोच को बिलकुल सपष्ट करता है। उनकी पहली पंक्ति थी अमेरिकी बहनों और भाइयों जो विश्व को एक सूत्रा में एक दृष्ट से देखता है, ऐसे महान व्यक्ति को यदा–कदा हिन्दू राष्ट्रवाद की बहस में एक उग्र धार्मिक राष्ट्रवाद की परिकल्पना में पेश किया जाता हैं यदि विवेकानंद जी के जीवन दर्शन को ध्यान से समझा जाये तो ऐसे मनगढंत और भ्रामक व्यक्तत्व बिलकुल ही निराधार नजर आते हैं। विवेकानंद जी अपनी मातृभूमि के उत्थान के लिये जिस राष्ट्रवाद की कल्पना करते हैं उसके मूल में मानवतावाद, आध्यात्मिक विकास और सांस्कृतिक न वजागरण है। इसे हासिल करने के लिये उहोंने वेदांतिक दर्शन को अपना उपकरण बनाया। विवेकानंद जी जिस भूमिका को समझने की बात करते थे, वह नए मनुष्य और नए समाज की भूमिका थी। करूणा, व्यक्तिगत स्वतंत्राता, समानता और विश्वबंधुत्व पर आधारित आधुनिक शक्तिशाली भारत के निर्माण की भूमिका थी। विवकानंद सच को अपना देवता मानते थे और कहते थे कि पूरी दुनिया मेरा देश है। राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता उनके लिये किसी संकीर्णता का नाम नहीं था। विवेकानंद जी तो ऐसे राष्ट्रवादी संत थे, जिन्हें भारत की मिट्टी के कण–कण से प्यार था। उनका कहना था– मैं भारतीय हूँ और हर भारतीय मेरा भाई है। अज्ञानी हो या फिर गरीब हो, अभावग्रस्त हो या ब्राह्मण या फिर अछूत हो वो मेरा भाई है। भारत का समाज मेरे बचपन का पालना है और मेरे जवानी के आनंद का बगीचा है। मेरे बुढ़ापे की काशी है। भारत की मिट्टी मेरे लिये सबसे बड़ा स्वर्ग है।

शब्द संकेत : राष्ट्रवाद, विवेकानंद, मातृभूमि, विश्वबंधुत्व एवं भारतीय।

विषय प्रवेश :

भारत ऋषि परम्परा का देश है, ये ऋषि ही भारतीय मूल्य अध्यात्म संस्कृति और ज्ञान के सुदृढ़ करते हैं। वर्तमान समय युवाओं की उपभोक्तावादी संस्कृति और प्रबन्धकीय मेधा का है। उपलब्धियां ग्लोबल है। फिर भी देशकाल अथवा परिवेश को बदलने में उनकी कोई सार्थक भूमिका नहीं परिलक्षित होती है वरन् मूल्यबोध के विषय में युवा पीढ़ी दूर है। ऐसे परिवेश में विवेकान्द का राष्ट्रवाद और युवाओं का आवाह्न सामायिक महत्व है। स्वामी विवेकानन्द एक महान देश भक्त चिन्तक, आध्यामिक, नेता, मानवता प्रेमी तथा जागृत करने वाले सन्त थे। वे आधुनिक मानव के आदर्श प्रतिनिधि है। वैदिक धर्म एवं संस्कृति के समस्त स्वरूपों के उज्जवल प्रतीक होते हुए वे एक ऐसे भारतीय विचारक हैं जिन्होंने भारतीय संस्कृति व धर्म को व्याख्यायित करने का गुरूतर कार्य किया साथ ही पूर्वकालीन अवधारणाओं को समकालीन संदर्भ में परिभाषित कर एक नूतन राजनीतिक समझ को जन्म दिया। स्वामी जी के विचारों से भारत ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व प्रभावित एवं लाभान्वित हुआ। आज के वैज्ञानिक युग में मानव के समक्ष अनेकानेक समस्याएं हैं उनके प्रति हमारी समझ तथा निकराकरण के मार्ग भी उन्होंने प्रस्तुत किए। ये सभी मार्ग उन चिरन्तन सत्यों पर आधारित है जो वेदान्त तथा विश्व के अन्य महान धर्मों में निहित हैं। उनके ही शब्दों में जो धर्म पूरी दुनिया को परम् सहिष्णुता एवं सभी मतों की सार्वजनिक स्वीकृति की शिक्षा देता है मैं उसी धर्म का हूं उस पर मुझे गर्व है।

12 जनवरी 1863 को कलकत्ता में नरेन्द्रनाथ का जन्म होना फिर स्वामी रामकृष्ण परमहंस के संपर्क में आकर बालक नरेंद्र का स्वामी विवेकानंद बन जाना एक अलग कहानी है। उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है। शिकागो विश्व धर्मसंसद में धर्म और राष्ट्रवाद पर दिया उनका भाषण। 1893 को शिकागो में आयोजित विश्व धर्म संसद में स्वामी विवेकानंद द्वारा अपने विश्व प्रसिद्ध भाषण में भारत में राष्ट्रवाद की जिस चेतना को जागृत किया था वह चेतना गुलाम भारत में उस राष्ट्र पुनरूत्थान के लिए अति आवश्यक थी, जिस राष्ट्र की बहुसंख्यक जनता अपने समग्र संसाधनों और पूर्ण एकजुटता से 1857 के प्रथम स्वतंत्राता संग्राम में अंग्रेजों के विरूद्ध लड़कर पराजित हो चुकी थी। स्वामी विवेकानंद हर तरह की विविधता के समर्थक थे। बहुलता पर आधारित राष्ट्रवाद उनका लक्ष्य था। उनका कहना था कि हल पकड़े हुए किसानों की कुटिया से नए भारत का उदय हो मोची मछुआरों और भंगी के दिल से नए भारत का उदय हो। पंसारी की दुकान से नए भारत का जन्म हो। बगीचों और जंगलों से उसे निकलने दो पर्वतो और पहाड़ों से उसे निकलने दो। विवेकानंद जी का मानना था कि नैसर्गिक और स्वस्थ राष्ट्रवाद का विकास तभी होगा जब न सिर्फ धर्मों के बीच बल्की पूरब और पश्चिम की संस्कृतियों के बीच बराबरी का आदान–प्रदान हो।

1893 में शिकागो की धर्मसभा में दिया गया विवेकानंद जी का

भाषण उनकी विश्व बंधुत्व की सोच को बिलकुल सपष्ट करता है। उनकी पहली पंक्ति थी अमेरिकी बहनों और भाइयों जो विश्व को एक सूत्रा में एक दृष्ट से देखता है, ऐसे महान व्यक्ति को यदा–कदा हिन्दू राष्ट्रवाद की बहस में एक उग्र धार्मिक राष्ट्रवाद की परिकल्पना में पेश किया जाता हैं यदि विवेकानंद जी के जीवन दर्शन को ध्यान से समझा जाये तो ऐसे मनगढंत और भ्रामक व्यक्तत्व बिलकुल ही निराधार नजर आते हैं।

विवेकानंद जी अपनी मातृभूमि के उत्थान के लिये जिस राष्ट्रवाद की कल्पना करते हैं उसके मूल में मानवतावाद, आध्यात्मिक विकास और सांस्कृतिक न वजागरण है। इसे हासिल करने के लिये उहोंने वेदांतिक दर्शन को अपना उपकरण बनाया। विवेकानंद जी जिस भूमिका को समझने की बात करते थे, वह नए मनुष्य और नए समाज की भूमिका थी। करूणा, व्यक्तिगत स्वतंत्राता, समानता और विश्वबंधुत्व पर आधारित आधुनिक शक्तिशाली भारत के निर्माण की भूमिका थी।

शिकागों धर्मसभा के विदाई भाषण में विवेकानंद जी ने कहा था –धर्मों के बीच एकता के बारे में बहुत कुछ कहा गया है लेकिन अगर कोई ये सोचता है कि एक धर्म के दूसरे धर्म पर जीत स्थापित करने से एकता स्थापित होगी तो ये गलत है। मैं उन्हें कहना चाहता हूँ कि बंधु आप गलत उम्मीद लगा बैठे हैं। क्या मुझे यह उम्मीद लगानी चाहिये कि क्रिश्चियन हिन्दू हो जाये या फिर हिन्दू और बौद्ध को क्रिश्चियन हो जाना चाहिये। ईश्वर माफ करे। विवकानंद सच को अपना देवता मानते थे और कहते थे कि पूरी दुनिया मेरा देश है। राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता उनके लिये किसी संकीर्णता का नाम नहीं था। विवेकानंद जी तो ऐसे राष्ट्रवादी संत थे, जिन्हें भारत की मिट्टी के कण–कण से प्यार था। उनका कहना था– मैं भारतीय हूँ और हर भारतीय मेरा भाई है। अज्ञानी हो या फिर गरीब हो, अभावग्रस्त हो या ब्राह्मण या फिर अछूत हो वो मेरा भाई है। भारत का समाज मेरे बचपन का पालना है और मेरे जवानी के आनंद का बगीचा है। मेरे बुढ़ापे की काशी है। भारत की मिट्टी मेरे लिये सबसे बड़ा स्वर्ग है।

ऐसी घनघोर हताशा और निराशा के बीच विश्व धर्म संसद में अपनी आध्यात्मिक शक्ति से दुनिया को नई राह दिखाने का जो वक्तव्य विवेकानंद ने शिकागों की धर्म संसद में किया उससे समस्त भारत में एक नई चेतना और एक नए आत्मविश्वास का संचार हुआ। उस धर्म संसद में भारत की शक्ति का स्रोत उसकी धार्मिक सहिष्णुता और धर्म में सार्वभौमिक स्वीकृत को बताया।

विवेकानन्द ने कहा – मुझे गर्व है कि मैं उस धर्म से हूँ जिसने दुनिया को सहिष्णुता और सार्वभौमिक स्वीकृति का पाठ पढ़ाया हम सिर्फ सार्वभौमिक सहिष्णुता पर ही विश्वास नही करते बल्कि हम सभी धर्मों को सच के रूप में स्वीकार करते हैं। मुझे गर्व है कि मैं उस देश से हूँ जिसने सभी धर्मों और सभी देशों से सताए गए लोगों को अपने यहां शरण दी। मुझे गर्व है कि आपने दिल में हमने इजरायल की वह पवित्रा यादें संजों कर रखी हैं जो हमलावरों ने नष्ट कर दी। गीता के श्लोक का उदृत कर विवेकानंद कहते हैं। जो भी मुझ तक आता है चाहे कैसा भी हो मैं उस तक पहुंचता हूँ। लोग अलग–अलग रास्ते चुनते हैं परेशानियां झेलते हैं, लेकिन आखिर में मुझ तक पहुंचते हैं। अर्थात् सभी धर्मों की शिक्षाएं सभी धर्मों के रास्ते भले ही अलग–अलग हैं लेकिन सब धर्मों का मूल वह एक सर्वशक्तिमान ही है, जो मानवता में ही प्रतिबिंबित होता है। अर्थात् मनुष्यता का कल्याण ही सभी धर्मों का मूल है।

अपने प्रारम्भिक काल में भारत भ्रमण के समय भारतवासियों की गरीबी और पिछड़ेपन से अत्यन्त दुखी थे जिस हेतु उन्होंने राष्ट्रीय जागरूकता पैदा करना प्रारम्भ किया एवं युवाओं को समाज सेवा हेतु आकर्षित किया। आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए उन्नत खेती, ग्रामीण उद्योग तथा स्वच्छतापूर्ण जीवन आवश्यक है। सदियों से शोषण और सामाजिक निरंकुशताः सहने के कारण लोग गरिमा और आशा की भावना खो चुके हैं। आत्म विश्वास का संचार किया जाना आवश्यक है और इसका उत्तर हमारी प्राचीन आध्यात्मिक संस्कृति की देन अर्थात् वेदान्त में मौजूद है।

स्वामी जी के राजनीतिक चिन्तन का आधार धर्म रहा। उनकी दृष्टि में धर्म से समाजोत्थान और समाजोत्थान से राष्ट्रवाद सुदृढ़ होता है। वे राजनीतिक आन्दोलन के पक्षधर नहीं थे। किन्तु हृदय से चाहते थे कि एक शक्तिशाली वीर और गतिशील राष्ट्र का निर्माण हो। वे किसी धर्म राजनीतिक दार्शनिक नहीं थे। उन्होंने स्वयं लिखा है। मैं न राजनीतिक हूँ न राजनीनिक आन्दोलन मचाने वालों में हूँ। मैं केवल आत्म तत्व की चिन्ता करता हूँ जब ठीक होगा तब काम अपने आप ठीक हो जायेंगे।

इसके बाद उनके विचारों में एक परिपक्व राजनीतिक दार्शन परिलक्षित होता है। देशवासियों को निर्भयता और कर्म की प्रेरणा से ही भारतीय राष्ट्रवाद की जागृति संभव हो सकी। व्यक्ति की गरिमा चिन्तन की स्वतंत्राता, नारी जागरण, दलितोद्धार एवं विश्व बंधुत्व पर व्यक्त विचार उन्हें श्रेष्ठ राजनीतिक सिद्ध करते हैं। विवेकान्द ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद से भारतीयों में गौरवमयी अतीत के प्रति अलख जगाई।

विश्व के सम्मुख भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता की घोषण से हिन्दुओं में नवीन प्रेरणा और शक्ति का संचार हुआ। जो यूरोपीय सभ्यता के साथ राष्ट्रीय पुनरूत्थान का मार्ग भी प्रशस्त किया। स्वामी जी के हृदय में देश और देशवासियों के लिए असीम प्रेम था जो समय पर उनके संदेशों में दिखाई देता है, उन्हीं के शब्दों में गर्व से कहो में भारतीय हूँ सारे भारतीय मेरे बन्धु हैं। भारत की मिट्टी मेरे लिए स्वर्ग है भारत के कल्याण में मेरा कलयाण है। पुनः ईश्वर की सेवा करना चाहते हो तो मनुष्य की सेवा करो। इस मनुष्य की जिसे तुम्हारी सहायता की प्रबल आवश्यकता है। दीन, दुखी, असहाय और पीड़ित मानवता की सेवा ही ईश्वर की सच्ची सेवा है। इस तरह विवेकाननद के धार्मिक आध्यात्मिकता का त्याग कर दोगे और पश्चिम की सभ्यता के पीछे दौड़ोगे तो इसका परिणाम यह होगा कि तीन पीढ़ियों में तुम एक मृत जाति बन जाओगे क्योंकि इससे राष्ट्र की रीढ़ टूट जाएगी और जिसका फल सर्वोगीण विनाश होगा। स्वामी जी के चिन्तन में स्वतंत्राता प्रमुख स्थान रचाती है उनकी दृष्टि में सम्पूर्ण विश्व सतत्

स्वत्राता की ओर अग्रसर है।

जीवन सुख और समृद्धि की एक मात्रा शर्त चिन्तन और कर्य में स्वतंत्राता है। जिस क्षेत्रा में नहीं है उस क्षेत्रा में मनुष्य जाति और राष्ट्र का पतन होगा। स्वामी जी इस दृष्टि से व्यावहारिक दार्शनिक थे कि उन्होंने आध्यात्मिक के साथ–साथ अपने राष्ट्रवादी विचारों में सर्वोंगीन प्रगति के लिए स्वतंत्राता को अत्याज्य माना। स्वतंत्राता उनके लिए एक प्राकृतिक अधिकार है जिसे समाज के सभी सदस्यों को समान रूप में प्राप्त होना चाहिए।

विवेकानंद के राष्ट्रवादी चिन्तन में शक्ति और निर्भीकता भी महत्वपूर्ण थी। उन्होंने भारतीयों को शक्ति और निर्भीकता का संदेश दिया। अपने सभी संबंधों में वे प्रायः इस बात को रे,खांकित करते थे कि शक्ति और निडरता के अभाव में न तो व्यक्तिगत अस्तित्व की रक्षा हो सकती है और न ही संघर्ष किया जा सकता है। इस प्रतिरोध के आधार पर ही भारतीय वैदेशिक शक्ति से संघर्ष कर सके। वे कायरता को घृणा की दृष्टि से देखते थे। उन्होंने कहा था –

> कायरता एवं राजनीतिक मूर्खता से मेरा कोई संबंध नहीं। सरल रूप से स्वामी जी भारतीय में एक ऐसी चारित्रिक शक्ति भर देना चाहते थे, जो त्याग और निडरता से उत्पन्न होती है। उन्हें युवाओं की शक्ति पर और कर्ममय जीवन पर विश्वास था। स्वामी विवेकानंद राष्ट्र निर्माण में व्यक्ति का गौरव भी देखते थे। जब सद्गुणों का विकास होगा, सम्मान और गरिमा जाग्रत होगी तभी राष्ट्र शक्तिशाली बन सकेगा। उनके ही शब्दों में मानव स्वभाव के गौरव को सदैव याद रखना है।

स्वाजी जी ने विश्वधर्म संसद में जिस तरह सभी धर्मों और सबके ईश्वर की चर्चा की उससे उनकी अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि और विश्व बंधुत्व स्पष्ट होता है। यद्यपि स्वामी जी हिन्दु धर्म की श्रेष्ठता में विश्वास रखते थे। किन्तु साथ ही उन्हें किसी अन्य राष्ट्र से घृणा नहीं थी। स्वामी विवेकानंद के हृदय में गरीबों, असहायों एवं महिलाओं के लिए भरपूर सम्मान था। इसीलिए उन्होंने कहा था। झोपड़ियों में निवास करता है झोपड़ियों की दशा सुधारनी होगी। स्वामी जी इस निष्कर्ष पर पहुंच चुके थे कि समाज में समता स्थापित करनी होगी। जीवन एक संघर्ष है और संघर्ष बन्द होने का अर्थ है मृत्यु। स्वामी जी महिलाओं के सम्मान और उत्थान के भी पक्षधर थे। उनकी दृष्टि में भी समाज की दुर्दशा का प्रमुख कारण महिलाओं की अवहेलना है। अतः महिलाओं को ऐसी शिक्षा देनी होगी जिससे उनके मन की शक्ति बढ़े और बुद्धि का विकास संभव हो। इस तरह स्वामी विवेकानंद के तेजमय जीवन और राजनीतिक चिन्तन से यह निष्कर्ष लिया जा सकता है कि उन्होंने जन जागरण द्वारा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की नींव रखी। कर्म पर बल देकर निर्भीकता को आगे रखा। तत्कालीन भारत के समक्ष उपस्थित चुनौतियों यथा गरीबी, अशिक्षा, अन्धविश्वास, धर्म और जाति का अलगाव आदि को चिन्हित किया। रामकृष्ण मिशन की स्थापना कर भारत में वेदान्त का प्रचार किया और विश्व बंधुत्व का संदेश दिया। स्वामी जी हर रूप में मानवता का आध्यात्मिक उत्थान चाहते थे। केवल सम्भावनाओं का विकास करना है और उसे साकार रूप देना है। आज के युग में जब प्रत्येक व्यक्ति आत्म केन्द्रित और स्वार्थी हो रहा है। ऐसे में स्वामी का संदेश ही देश की रक्षा कर सकता है।

भारत का उत्थान–पतन स्वामी विवेकानंद ने सारे भारत को अत्यन्त निकट से देखा था। उन्होंने भारतीयता को अपने अन्दर जीया था। इस जीवन्त अनुभूति पर आधारित उनका चिन्तन था। सामान्यतः इतिहास को विदेशी दृष्टि से देखने के आदी आधुनिक विद्वान स्वामीजी की अन्तदृष्टि की गहराई को नहीं पकड़ पाते हैं उन्हें स्वामीजी की राष्ट्रभक्ति व उनकी मानवता में विरोधाभास दिखाई पड़ता है। इसका कारण उनका स्वयं का राष्ट्रबोध आधुनिक पश्चिमी विचार से प्रभावित है। पश्चिम में प्रथमतः साम्राज्य की राजनैतिक दृष्टि से राष्ट्रबोध जगा और द्वितीय महायुद्ध के बाद जब साम्राज्यों का पतन हुआ तब अमेरिकी नेतृत्व में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्भव हुआ। इन दोनों ही दृष्टि से भारत को समझने का प्रयत्न असफल ही होगा। वास्तव में इन अधुरी धारणााअें से वे भी स्वयं को परिभाषित नहीं कर पा रहे हैं।

आज विश्व भी यह मानने की ओर चल पड़ा है कि राष्ट्रयता का आधार संस्कृति व धर्म ही होता है। स्वामी विवेकानंद ने इस सांस्कृकि राष्ट्रवाद का परिचय भारत को करवाया। उन्होंने हिन्दूत्व को भारत की राष्ट्रीय पहचान के रूप में प्रतिष्ठित किया। किन्दू राष्ट्र इस शब्दावली का प्रथम प्रयोग सम्भवतः स्वामी विवेकानंद ने ही किया है। शिकागों में अपने प्रथम भाषण में उन्होंने अपने हिन्दू होने पर गर्व का विस्तार से वर्णन किया है।

इस राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में समझने पर हमें हमारे विशाल देश की बाहरी विविधता में अन्तर्निहित एकात्मका के दर्शन होते हैं। विविधता राजनैतिक व्यवस्था में भी रही होगी किन्तु सहस्रसाब्दियों से यह भारतवर्ष, आर्यावर्त एकसंध सांस्कृतिक राष्ट्र रहा है। स्वामी जी ने शिकागों दिग्विजय से वापसी पर पूरे भारत में इसी राष्ट्रवाद का जागरण किया। उन्होंने स्पष्ट घोषणा की कि केवल अन्ध देख नहीं पाते और विक्षिप्त बुद्धि समझ नहीं सकते कि यह सोया देश अब जाग उठा है। अपने पूर्व गौरव को प्राप्त करने से इसे अब कोई नहीं रोक सकता।

उन्होंने हिन्दूओं को सब भेदों से उपर उठकर अपनी राष्ट्रीय पहचान पर गर्व करना सिखाया। लाहौर में जब आर्यसमाज व सनातनी उनका अलग अलग सम्मान करना चाहते थे तब उन्होंने स्वीकार नहीं किया। एक मंच पर आर्यसमाज, सनातन धर्म सभा व सिख समाज ने उनका स्वागत किया।

स्वामी विवेकानंद ने इस बात को कई बार दोहराया था कि भारत के पतन का कारण धर्म नहीं है, अपितु धर्म के मार्ग से दूर जाने से ही भारत का पतन हुआ है। इतिहास साक्षी है। कि जब–जब हम अपने धर्म को भूल गये तब तब हमारा पतन हुआ। हर बार धर्म के जागरण से ही नवोत्थान की लहर चली।

स्वामीजी के समय धर्मग्लानी के जो तीन प्रखर लक्षण स्वामीजी ने देखे थे वे आज भी कमोवेश समाज में वैसे ही व्याप्त दिखाई देते हैं। ये लक्षण थे –

1. जन सामान्य का अनादर
2. नारी शक्ति का अपमान
3. शुभकार्य में रत लोगों में आपसी ईर्ष्या

स्वामीजी का मानना था कि इन तीन समस्याओं का निदान नही भारत के उत्थान का एकमात्रा उपाय है। हालांकि इन तीनों स्तरों पर विलक्षण कार्य गत शताब्दी में हुआ है। संविधान व विधिक संरचना के स्तर पर सामान्य जनों व नारी के लिये विभिन्न अवसरों का निर्माण स्वतंत्रा भारत में किया गया। समाज के इन घटकों में बड़ी मात्राा जागरण भी देखने को मिला है। आज भी अनेक पीछड़ें क्षेत्रों में हम नहीं पहुंच पाये हैं फिर भी प्रयासों में कम नहीं है। गति व प्रगति दोनों हो रही है। ईर्ष्या को दूर कर संगठित होने का प्रक्रम भी समाज के स्तर पर तो बड़ी मात्राा में चला है। हम अपने स्तत्व को ही भूल गये हैं। अमेरिका की तरह ही भारत को भी अपने आप से पूछना होगा। हम हैं कौन? भारतीय होने का अर्थ क्या है? अपने स्वयं के ऐतिहासिक अनुभव के आधार पर अपनी खोज। अपने पूर्वजों के धर्म व संस्कृति के आधार पर अपनी राष्ट्रीयता की खोज। इस सबके लिये आवश्यक है धर्म जागरण। जबतक भारत में पुनः धर्म को प्रतिष्ठित नहीं किया जायेगा तब तक सारे प्रयास अधूरे ही होंगे। स्वामीजी ने इस नवजागरण का सुत्रापात किया था। उन्होंने आह्वान किया था युवाओं का कि उनकी इस योजना पर कार्य करें। आश्वासन भी दिया था कि जो उनके कार्य में जुट जायेगा वे स्वयं कंधे से कंधा लगाकर उसका साथ देंगे। आज भी उनके कार्य को अपना जीवनव्रत बनानेवाले युवा इस सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं। एक अनुपम अवसर हमारे समक्ष है।

सांप्रदायिकता पर चोट :

सांप्रदायिक कट्टरता और इसके भयानक वंशजों के धार्मिक हठ ने लंबे समय से इस खूबसूरत धरती को जकड़ रखा है। उन्होंने इस धरती को हिंसा से भर दिया है और कितनी ही बार यह धरती खून से लाल हो चुकी है न जाने कितनी सभ्यताएं तबाह हुई कितने देश मिटा दिए गए यदि खौफनाक राक्षस नहीं होते तो मानव समाज कहीं ज्यादा बेहतर होता जितना की अभी हैं।

धर्म संसद में विवेकानंद पुरी दुनिया से हर तरह की कट्टरता हठधर्मिक और दुखों का विनाश करने का आह्वान करते हैं फिर चाहे वह विनाश तलवार से किया जाए अथवा कलम से।
विवेकानंद के ऐसे ही धार्मिक विचार का सम्मान करते हुए सुभाष चंद्र बोस उन्हें आधुनिक भारत का निर्माता कहते हैं, जिस प्रकार की धर्म की कल्पना विवेकानंद ने की। जिसके मूल में मानव कलयाण हो, जिसमें किसी भी प्रकार की कट्टरता और हिंसा ना हो धर्म का वही स्वरूप भारतीय संविधान के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप में भी झलकता है। वह हर प्रकार की सांप्रदायिकता और कट्टरता का विरोध करते हैं यही उदार और सहिष्णु धर्म विवेकानंद के राष्ट्रवाद का आधार भी है। मौजूदा समय में समाज में राष्ट्रवाद के नाम पर विभिन्न प्रकार की कट्टर धार्मिक गतिविधियां जारी हैं, अलग–अलग प्रकार के संगठन इस कुथित राष्ट्रवाद के विचार को पुष्पित पल्लवित कर रहे हैं, लेकिन उनमें से अधिकांश संगठन जिस राष्ट्रवाद की अवधारणा को आगे लेकर आते हैं वह अवधारणा बहुसंख्यक समाज के धार्मिक हितों और प्रतमीकों को आगे करके गढ़ी जाती है, जिसमें धार्मिक सहिष्णुता का तत्व विलीन होता दिखता है वह विपरीत मत के धर्मावलंबियों को सुरक्षा का भाव ना देकर एक अज्ञात भय से भर देता है।

पूर्व अध्ययनों की समीक्षा :

चन्द्रा, विपीन (1993) द्वारा लिखित पुस्तक ''एस्से ऑन इण्डियन नेशनलिज्म'' में कहना है कि भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म स्वामी विवेकानंद के द्वारा ही हुआ है। उनकी पहली शिकागों में की गई पहली अभिव्यक्ति में ही भारतीय संस्कृति में ही एवं राष्ट्रवाद का स्पष्ट झलक दिखलाई पड़ता है। स्वामी जी का कहना था कि राष्ट्रप्रेम सच्चे देश भक्तों के लिए सर्वोपरि है।

वक्षी, एस0एस0 एवं शर्मा, के0सी0 (2007) द्वारा अनुवादित पुस्तक ''इन साइक्लोपिडिया ऑफ इण्डियन नेशनलिज्म'' में कहना है कि स्वामी विवेकानंद भारतीय राष्ट्रवाद के अग्रणी चिंतक थे। उनका राष्ट्रवाद भारतीय संस्कृति की मूल अवधारणाओं से संबंधित है। उनका कहना था कि राष्ट्रप्रेम के बिना जीवन अधूरा है।

सिंह, विरेन्द्र कुमार (2011) द्वारा लिखित पुस्तक ''इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डियन फ्रीडम फाइटर्स'' में कहना है कि स्वामी विवेकानंद के चिंतन का भारतीय राष्ट्रवाद अब पूर्ण रूप से भारत में नहीं रह गया है। स्वामी जी के चिंतन का राष्ट्रवाद विश्व प्रेम पर आधारित है। आज क्षेत्रिाय दल एवं क्षेत्रिाय राजनीतिक के कारण राष्ट्रवाद की अवधारणा पर आघात पहुँचा है।

सरकार, सुमित (1983) द्वारा लिखित पुस्तक ''मॉडर्न इण्डिया 1885–1947'' में कहना है कि भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म स्वामीजी के शिकागों अभिव्यक्ति का एक स्पष्ट उदाहरण है। सभी धर्मों को साथ लेकर चलने की अवधारणा स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवाद में निहित है।

अध्ययन का उद्देश्य :

स्वामी विवेकानंद और भारतीय राष्ट्रवाद से संबंधित शोध आलेख का उद्देश्य निम्नलिखित तथ्यों पर आधारित है :–

- इस अध्ययन के आधार पर स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवादी चिंतनों का तथ्यपरक विश्लेषण किया गया है।

- वर्त्तमान अध्ययन के आधार पर स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवादी विचारधारा का वर्तमान समय में प्रासंगिकता का अन्वेषन किया गया है।

अध्ययन पद्धति :

यह शोध आलेख मुख्य रूप से वर्णन एवं विश्लेषणात्मक एवं ऐतिहासिक आलोचनात्मक अध्ययन पद्धति पर आधारित है। वर्त्तमान अध्ययन स्वामी विवेकानंद और भारतीय राष्ट्रवाद के विविध पक्षों के अन्वेषण से संबंधित है अतः यह शोध आलेख मुख्य रूप से द्वैतियक स्रोत पर आधारित है। इस अध्ययन के लिए मूल अध्ययन स्रोत तत्कालीन पत्रा–पत्रिकाओं एवं दस्तावेज तथा विभिन्न आचार्यों द्वारा सम्पादित पुस्तकों द्वारा लिया है।

निष्कर्ष :

इस प्रकार राष्ट्रवाद के नाम पर जिस प्रकार की धार्मिक अवधारणाओं को आज आगे किया जा रहा है। धार्मिक आधार पर मॉब लिंचिंग की घटनाएं हो रही हैं जिसकी पराकाष्ठा ने कानून के शासन के समक्ष चुनौतियों पेश कर दी है मजबूरन जिस पर सर्वोच्च न्यायालय को हस्तक्षेप करना पड़ रहा है ऐसा करना किसी राष्ट्रीय शर्म से कम नहीं है। राष्ट्रवाद के नाम पर ऐसी गतिविधियां निश्चित रूप से विवेकानंद के बहु–सांस्कृतिक और सहिष्णु राष्ट्रवाद पर चोट करते प्रतीत होती है। यही आज के समय की सबसे बड़ी चुनौती भी है। शिकागो धर्म सम्मेलन में विवेकानंद द्वारा धर्म के जिन मूल तत्व को रेखांकित किया, यदि आज हमें उन्हें समझनें लगे तो धर्म के आधार पर राष्ट्र के समक्ष उपस्थित समक्षा समस्त खतरे स्वतः समाप्त हो जाएंगे और इस प्रकार की समझ का विकसित होना ही विवेकानंद को सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ऐसे सात्विक और विश्व बंधुत्व की भावना वाले स्वामी विवेकानंद जी का नाम जैसे ही जहन में आता है मन में उनके प्रति श्रद्धा की अनुभूति होती है। भारत के नैतिक मूल्यों को विश्व के कोने कोने में पहुंचाने वाले स्वामी विवेकानंद जी के राष्ट्रीय विचार हमारे अंदर देशप्रेम की भावना का संचार करते हैं।

सदर्भ स्रोत :

1. Chandra, Bipin (1993) Essays on Indian Nationalism, Har - Anand Publications Pvt. Ltd., New Delhi.
2. Bakshi, S.R. and Sharma, K.C. (ed.) (2007) Encyclopedia of Indian Nationalism, Vol. IX, Vista International Publishing House, New Delhi.
3. Singh, Birendra Kumar (2011) Encyclopedia of Indian Freedom Fighters, Vol. VIII, Centrum Press, New Delhi.
4. Sarkar, Sumit (1983) Modern India 1885-1947, Mac Millan India Press, Madras.
5. Rathod, P.B (2005) Modern Indian Political Thinkers, Common Wealth Publishers, New Delhi.
6. Sharma, L .P (1996) Indian National Movement, Lakshmi Narain Agarwal Educational Publishers, Agra.